दैनिक जागरण

Date: 01-06-17

भूल सुधार के इंतजार में देश

सुप्रीम कोर्ट के पांच जजों की संवैधानिक पीठ ने तीन तलाक की संवैधानिक वैधता को चुनौती देने वाली याचिकाओं पर सुनवाई पूरी कर ली है। अब समूचा देश अदालती फैसले का इंतजार कर रहा है। तीन तलाक के खिलाफ देश में मुस्लिम महिलाएं लंबे समय से आंदोलनरत हैं। मामला शीर्ष अदालत में जाने और देश के मौजूदा माहौल को देखते हुए अरसे के बाद यह उम्मीद जगी है कि मुस्लिम महिलाएं भी अन्य धर्मों के नागरिकों की तरह ही संविधान प्रदत्त न्याय और समानता के अधिकार पाने लगेंगी। ऐसी उम्मीद जगने के कई कारण हैं। पहला, दमनकारी सामाजिक परिवेश में रहने के बावजूद हजारों मुस्लिम महिलाएं तीन तलाक के विरोध में खुलकर सामने आ रही हैं और एकतरफा तलाक की इस कुप्रथा को खत्म करने की मांग कर रही हैं। दूसरा, पूर्व की कांग्रेस सरकार से इतर मोदी सरकार ने संवैधानिक मूल्यों को बहाल करने के लिए दृढ़ता दिखाई है। कांग्रेस सरकारों ने पर्सनल लॉ के मामले में संविधान की सर्वोच्चता का दावा करने की इच्छाशक्ति ही नहीं दिखाई थी।

इसके उलट मोदी सरकार ने न्यायालय के समक्ष यह कहा कि लैंगिक समानता एवं महिलाओं के सम्मान से समझौता नहीं किया जा सकता और इससे आंखें फेरना संवैधानिक मूल्यों की अवहेलना करने के समान है। उसने यह सवाल भी खड़ा किया कि क्या एक सेक्युलर लोकतांत्रिक संविधान में महिलाओं को मिले बराबरी और गरिमापूर्ण जीवन जीने के अधिकार को सिर्फ इस आधार पर खारिज किया जा सकता है कि कुछ धार्मिक मान्यताएं इसकी इजाजत नहीं देतीं? हालांकि पर्सनल कानून विविधता के संरक्षण के उद्देश्य को पूरा करते हैं, लेकिन क्या इसके चलते वे लैंगिक न्याय जैसे अति महत्वपूर्ण संवैधानिक लक्ष्य को नजरअंदाज कर सकते हैं? तीसरा, देश का मिजाज इस पुरातन व्यवस्था के खिलाफ है। देश आज तीन तलाक से मुक्ति चाहता है और संविधान में निहित आजादी को हासिल कर उसका जश्न मनाना चाहता है। देश मोबाइल क्रांति की ओर बढ़ रहा है। सोशल मीडिया का लगातार विस्तार हो रहा है। इन दोनों ने मिलकर सूचना क्रांति को हवा दे दी है जिस पर पुरुष प्रधान समाज अंकुश नहीं लगा सकता। इसके साथ ही आज मुस्लिम महिलाओं सहित अन्य धर्मों की महिलाओं में साक्षरता का स्तर लगातार बढ़ रहा है।

इस सबसे मिलकर देश में ऐसा वातावरण बन रहा है जिसमें अतीत की कुछ भयावह गलतियों में सुधार की संभावना प्रबल हो गई है। दरअसल संविधान निर्माताओं द्वारा संविधान में दी गई कुछ रियायतों और पिछले सत्तर सालों के दौरान चुनावी राजनीति की बाध्यताओं के चलते ही इतने लंबे अरसे तक मुस्लिम पर्सनल लॉ के अपमानजनक और असंवैधानिक प्रावधानों को कानून के रूप में मान्यता मिलती रही और उसे संविधान प्रदत्त लैंगिक समानता, कानून के समक्ष बराबरी और गरिमापूर्ण जीवन जीने के अधिकार की अवहेलना करने की अनुमति दी जाती रही। पिछले सत्तर सालों के दौरान यह समस्या इसलिए और विकराल हो गई, क्योंकि अल्पसंख्यक अधिकारों और धार्मिक अधिकारों को कभी भी संविधान की कसौटी पर नहीं कसा गया। इसमें अस्पष्टता रखी गई। इसके बीज 1946 में ही पड़ गए थे। विभाजन के आठ महीने पहले संविधान सभा ने अविभाजित भारत के लिए एक लोकतांत्रिक संविधान के निर्माण का काम आरंभ कर दिया था। मुस्लिम लीग ने हिंदुओं और मुस्लिमों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल बनाकर चुनाव कराने की मांग की। उसकी मांग पर संविधान सभा कुछ विचार करती, उससे पहले ही

विभाजन एक कड़वी हकीकत के रूप में देश के सामने आकर खड़ा हो गया। मुस्लिम लीग के अधिकांश नेता उसी पाकिस्तान में चले गए जिसकी वे मांग कर रहे थे, लेकिन उनमें से कई यहीं भारत में रह गए। इसके बाद भारतीय संविधान सभा ने जब दोबारा अपना काम शुरू किया तब कांग्रेस के नेताओं को लोकतांत्रिक संविधान लिखने जा रहे उसके सदस्यों से कुछ बुद्धिमता दिखाए जाने की उम्मीद थी, लेकिन वे तब स्तब्ध रह गए जब तमिलनाडु के एक सदस्य पोकर साहिब ने मांग की कि केंद्रीय और प्रांतीय विधानसभाओं के चुनाव पृथक निर्वाचक मंडल के आधार पर होने चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि गैर मुस्लिम नागरिक मुस्लिम समुदाय की आकांक्षाओं को नहीं समझ सकते। ऐसे में मुस्लिमों के लिए एक अलग निर्वाचन क्षेत्र बनें। सरदार पटेल और गोविंद बल्लभ पंत जैसे नेताओं को सहसा अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ कि पाकिस्तान बनने के महज दो हफ्ते बाद ही पृथक निर्वाचक क्षेत्र की नई मांग हो रही थी! वे उनकी बातों को सुनकर चकित हो गए। पटेल खड़े हुए और बोले, 'इस अभागे देश में यदि बंटवारे के बाद भी पृथक निर्वाचक मंडल को बरकरार रखा जाता है तो यह इसका दुर्भाग्य होगा।

फिर तो यह देश रहने योग्य नहीं रह जाएगा।' अन्य सदस्यों ने भी पटेल की बातों से सहमति जताई और पृथक निर्वाचक मंडल की मांग को दरकिनार कर दिया, लेकिन वे लोग ऐसी दृढ़ता समान नागरिक संहिता के संबंध में नहीं दिखा सके। इसका सारा श्रेय मुस्लिम नेताओं को जाता है जिन्होंने आखिर तक अपना कठोर रुख-रवैया बनाए रखा था। लिहाजा समान नागरिक संहिता के विचार को ठंडे बस्ते में डाल दिया गया। बाद में संविधान निर्माताओं ने इसे राज्यों के नीति निदेशक तत्वों में शामिल कर लिया। हालांकि मुस्लिम सदस्यों ने इसका भी विरोध किया, लेकिन डॉ. अंबेडकर ने इस पर झुकने से इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा कि राज्य को विवाह और उत्तराधिकार के मामलों में कानून बनाने का अधिकार होगा। यदि समान नागरिक संहिता वजूद में आ गई होती तो आज सभी पर्सनल लॉ संविधान की मूल भावना की छत्रछाया में होते। ऐसा नहीं हुआ और उलटे एक गड़बड़ी यह हुई कि आजादी मिलने के दशक भर के भीतर ही प्रतिस्पर्धी चुनावी राजनीति ने देश में मुस्लिम तुष्टीकरण की नींव डाल दी। नेहरू काल से ही कांग्रेस पार्टी को इसमें महारत हासिल रही है और वह मुस्लिमों को एक वोट बैंक के रूप में देखती रही है।

वह इस बात का संकेत देकर मुल्लाओं की लगातार खुशामद करती रही कि उनके पर्सनल लॉ से कभी छेड़छाड़ नहीं की जाएगी और इस प्रकार समान नागरिक संहिता महज एक काल्पनिक मुद्दा बनकर रहा गया। बाद में दूसरी राजनीतिक पार्टियां भी इस खेल का हिस्सा बन गईं और मुस्लिम तुष्टीकरण की राजनीति में एक दूसरे से होड़ करने लगीं। 1963 में जब तत्कालीन केंद्र सरकार ने इस्लामिक देशों में मुस्लिम पर्सनल लॉ में किए गए बदलावों का परीक्षण करने के लिए एक समिति गठित करनी चाही तो मुस्लिम धर्मगुरुओं की ओर से उसे भारी विरोध का सामना करना पड़ा। लिहाजा उसे मजबूरन अपने कदम वापस खींचने पड़े। कालांतर में उन्होंने इंदिरा गांधी पर कॉमन एडॉप्शन लॉ (गोद लेने संबंधी साझा कानून) नहीं लाने के लिए दबाव बनाया। शाहबानो मामले में सुप्रीम कोर्ट के उस फैसले को संसद में कानून बनाकर निष्प्रभावी करने के लिए राजीव गांधी को बाध्य किया गया जिसने मुश्किल में फंसी एक मुस्लिम महिला को राहत दी थी। अब देश में एक बार फिर वैसी ही परिस्थितियां पैदा हो गई हैं। ऐसे में सबकी नजरें सुप्रीम कोर्ट पर टिकी हैं। तीन तलाक पर उसका फैसला एक नजीर बन सकता है।

ए. सूर्यप्रकाश [लेखक प्रसार भारती के प्रमुख एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं]

THE TIMES OF INDIA

Date: 01-06-17

Modi in Germany

India must cement mutually beneficial ties with an evolving EU

Marking growing warmth in bilateral ties, India and Germany have signed a slew of pacts covering cyber security, urban development, vocational education and infrastructure during Prime Minister Narendra Modi's visit to the European nation. In fact, Modi even took the opportunity to emphasise that India and Germany are made for each other. There's great scope for synergy. German investments in Indian infrastructure under the Make In India framework or the Smart Cities initiative can do wonders for the Indian economy. Meanwhile, India is a huge market for German companies – an equation that Berlin would like to strengthen further.

Germany today is looking for stable partners in the developing world in light of uncertainties in the overall global order. Europe, for example, is undergoing fundamental shifts following Brexit. Add to this US President Donald Trump trying to modify America-Europe relations by asking EU members to shoulder greater responsibility for their defence. Trump has also criticised the American trade deficit with Germany, stating this needed to change. All of this compelled German Chancellor Angela Merkel to comment that the US and UK may no longer be completely reliable partners.

It's in this context that Modi's ongoing Europe tour needs to be seen. Germany has decided to play the role of sheet anchor of EU and is even quietly going about laying the foundation of a combined European defence force by integrating military divisions from smaller European nations. Then there is Germany's determination on climate change mitigation efforts – something that isn't shared by Trump. And with Emmanuel Macron – a strong Europhile – being elected French President, the Germany-France relationship is likely to shape the future direction of Europe. This is precisely why Modi's schedule also includes visits to Spain and France. As EU evolves, India would do well to reaffirm its support to the European bloc and push for investments and technology transfers.

Besides, it needs to be borne in mind that China too is eyeing developments in EU for its own strategic interests. For New Delhi to not lose out to Beijing, the former should devote more resources to actualising the India-EU free trade agreement. As Europe emerges from America's shadows it will become a veritable standalone pole of the multipolar global order. India needs to capitalise on this and take ties with the continent to the next level.

THE ECONOMIC TIMES

Date: 01-06-17

Changing gears on the Modi-Merkel autobahn

Prime Minister Narendra Modi's visit to the three biggest economies of the European Union could not have been better timed. Uncertainty over the nature of US-EU relations, and an underlying discomfort with an aggressive China adds to the attraction of India as a long-term partner. The visit, close on the heels of a significant tax reform, the Goods and Services Tax (GST) on its way, provides demonstrable action of India's intention to augment this partnership.India's bilateral trade with Germany is at ¤17.4 billion ($19.74 billion) in 2016, a fraction of the value of Germany's trade with its No. 1trade partner, China. But the room to grow is immense, and Chancellor Angela Merkel gets this. This is a good opportunity to get the ball rolling on the EU-India free trade agreement, which has been stalled since 2013. Indications that talks will resume in July is welcome. With a slew of reforms and streamlined systems in place, India can now pitch for a bigger share of investments — German foreign direct investment in 2016 stood at $1.1billion.In the context of China's One Belt One Road initiative, Modi and Merkel are converging on working together in Africa, focusing on renewable energy, connectivity, vocational training, and have called on businesses to collaborate on promoting trade and development.Climate change is an important focus area. India has made it clear it is committed to the Paris Agreement. The two countries remain committed to working with Afghanistan to tackle terrorism, thus containing Pakistan.

The Modi-Merkel meeting was about continuing with the partnership, and putting it on firmer ground. Both countries will work together on issues such as UN reforms, expansion of the UN Security Council, India's inclusion in export control regimes such as the Nuclear Suppliers Group, tackling terrorism, and the adoption of the Comprehensive Convention on International Terrorism. Modi and Merkel will have the opportunity to deepen this partnership when they meet for the G-20 summit in July in Hamburg. It will be another chance to demonstrate why India and Germany are good for each other

---

जनसत्ता

Date: 01-06-17

बर्लिन की राह

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की चार देशों की यात्रा का पहला मुकाम बर्लिन था। यों तो जर्मनी की चांसलर एंजला मर्केल से उनकी बातचीत दोनों देशों के बीच हर दो साल पर होने वाली द्विपक्षीय शिखर वार्ता की दूसरी कड़ी थी, पर कई कारणों से दोनों नेताओं की इस मुलाकात को ज्यादा बड़े परिप्रेक्ष्य में भी देखा जा रहा है। दोनों देशों के बीच पहला अंतर-सरकारी विचार-विमर्श अक्तूबर, 2015 में नई दिल्ली में हुआ था। तब सारा जोर आपसी व्यापार बढ़ाने पर था। इस बार भी वह एक प्रमुख विषय था, और यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि यूरोपीय संघ में जर्मनी भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है। इस मौके पर दोनों देशों के बीच आठ द्विपक्षीय समझौते हुए। भारत में विदेशी निवेश के मुख्य स्रोतों में जर्मनी भी है। जर्मनी की कोई सोलह सौ कंपनियां भारत में काम कर रही हैं और करीब छह सौ जर्मन कंपनियां यहां साझा कारोबार और साझी परियोजनाओं में शामिल हैं। लेकिन मोदी और एंजला की बातचीत में द्विपक्षीय कारोबार के अलावा और भी कई मुद्दे थे- जलवायु संकट से लेकर आतंकवाद तक।

जर्मनी अभी तक भारत को बढ़ते कारोबारी **अवसरों** के लिहाज से ही देखता रहा है। पर अब ऐसा लगता है कि भू-राजनीतिक दृष्टि से भी भारत के प्रति उसकी दिलचस्पी जगी है, शायद इसलिए कि इस वक्त दुनिया की बड़ी ताकतों के रिश्तों में अस्थिरता दिख रही है। ब्रिटेन यूरोपीय संघ से बाहर हो चुका है। डोनाल्ड ट्रंप के आने के बाद, जैसी कि आशंका थी, अमेरिका ने पेरिस जलवायु समझौते से किनारा करना शुरू कर दिया है। पिछले दिनों जी-7 की बैठक के दौरान ट्रंप ने पेरिस जलवायु समझौते से पल्ला झाड़ने का संकेत देने के अलावा जर्मनी की व्यापार नीति की खुलेआम आलोचना भी की। चीन के साथ रूस की निकटता और बढ़ रही है। चीन के साथ जर्मनी को विपुल व्यापारिक संभावनाएं दिखती हैं, पर चीन की राजनीतिक **व्यवस्था** यूरोपीय मिजाज से मेल नहीं खाती। हाल में चीन ने अपनी महत्त्वाकांक्षी योजना वन बेल्ट वन रोड (ओबीओआर) को लेकर बेजिंग में जो अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन बुलाया था उसमें जर्मनी ने भी शिकरत की थी, जबकि भारत सीपीईसी यानी चीन-पाकिस्तान आर्थिक कॉरीडोर पर अपने विरोध के कारण उस सम्मेलन से अलग रहा। **लेकिन** ओबीओआर को लेकर संशय यूरोप के कई और देशों के साथ-साथ जर्मनी में भी है। ऐसे में बड़ी अर्थव्यवस्था वाले देशों में भारत के प्रति **जर्मनी** का रुझान बढ़ना स्वाभाविक है।अंतर-सरकारी शिखर बैठक के बाद साझा प्रेस **कॉन्फ्रेंस** को संबोधित करते हुए मोदी ने कहा कि भारत और **जर्मनी** एक दूसरे के लिए बने हुए हैं, तो मर्केल ने भी भारत को भरोसेमंद साझेदार बताया। वर्ष 2015 में द्विवार्षिक अंतर-सरकारी शिखर बैठक की शुरुआत के साथ दोनों देशों ने आपसीरिश्तों को रणनीतिक स्तर पर ले जाने का इरादा जताया था। अब उसके लिए कहीं ज्यादा अनुकूल अवसर दिख रहा है और ऐसा लगता है कि इसका अहसास दोनों तरफ है। यूरोप अपने रणनीतिक उद्देश्यों के लिए हमेशा अमेरिका का मुंह जोहता रहा है और अमेरिका के वर्चस्व वाली सारी सामरिक संधियों में शामिल है। लेकिन ट्रंप के दूरंदेशी से रहित रवैए के कारण नए मित्र बनना तो दूर, पुराने मित्र भी खफा दिख रहे हैं। मर्केल का यह कहना गौरतलब है कि **जर्मनी** ब्रेक्जिट और ट्रंप के जमाने में ब्रिटेन और अमेरिका जैसे परंपरागत सहयोगियों पर पूरी तरह निर्भर नहीं रह सकता। इसलिए आश्चर्य **नहीं** कि भारत अब जर्मनी को केवल बाजार के नजरिए से नहीं, **बल्कि** कूटनीतिक लिहाज से भी काफी अहम लगने लगा है।

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date: 31-05-17

Stepping on toes

The court has also asked the Centre and the Tamil Nadu government to respond to the issues raised in a PIL.

The Centre's ill-advised move to ban sale and purchase of cattle for slaughter at animal markets across India has nudged sworn political rivals on to common ground. On Monday, Kerala Chief Minister Pinarayi Vijayan wrote to the prime minister and all the chief ministers that the Centre was making a "covert attempt to usurp the powers of the state legislature in the guise of rules under a Central Act". West Bengal CM Mamata Banerjee described the decision as "a deliberate attempt to encroach upon the state's powers". She called it an "attempt to destroy the federal structure of the country" and promised to challenge it "legally". Meanwhile, the Madurai bench of the Madras High Court on Tuesday stayed the ban for four weeks. The court has also asked the Centre and the Tamil Nadu government to respond to the issues raised in a PIL. The issue of federal rights, flagged by both Vijayan and Banerjee and political parties like the DMK, is certain to figure in the court proceedings and the Centre will be hard-pressed to explain its move. Its attempt to smuggle in the contentious political demand for a ban on cattle slaughter by changing the rules under the Prevention of Cruelty to Animals Act, 1960 may not withstand judicial scrutiny.

Vijayan and Banerjee rightly argue that the Centre's notification amounts to overreach. The notification issued by the Union Ministry of Environment indeed encroaches into the domain of state legislatures. Animal slaughter has been regulated or prohibited by state laws, in response to local social, economic and cultural preferences. The Centre has respected the diversity of aims in legislation because the spirit of federalism demands it. It is ironic that a government under a prime minister who pointedly promised to promote "cooperative federalism" has now sought to upset the balance in Centre-state relations. Prime Minister Modi, who was Gujarat chief minister for over a decade, has on many occasions spoken of the need for the Centre and the states to respect each other's rights and duties. The government's pushing through of the GST, by getting the states on board, is also an illustration of the spirit of cooperative federalism. Earlier, the government's decision to disband the Planning Commission and replace it with a think tank, the Niti Aayog, reflected its belief that the centralised planning process gave limited leeway to the states. The devolution of more tax revenues to the states was seen as a clear intent on the part of the Centre to empower the states. The cattle slaughter notification threatens to undo much of the good work done by the Centre in promoting the principle and practice of federalism.The Centre must step back and recognise that the opposition from Kerala and West Bengal is a warning. Similar concerns have been raised in the Northeastern states, where, too, bovine meat is part of the diet. Public policy cannot be set without factoring in the country's diversities.

Date: 31-05-17

Illegal and senseless

The proposed total ban on cattle slaughter goes against Supreme Court decisions on the matter since 1959

Less than a week ago, the Central government notified rules, many of which are as unconstitutional as they are senseless: A person is prohibited from bringing any type of cattle to an animal market for sale for slaughter. First, why is it unconstitutional? The ban on slaughter of cattle was a politically sensitive issue even before the Constitution came into force in 1950. In the Constituent Assembly, a few members supported a total ban but Rev. Nichols Roy made a cogent argument opposing the move, pointing out the economic consequences of maintaining old and sickly cattle, and that a large number of people consumed beef.

In the end, a partial ban was included as part of the Directive Principles (which represent our constitutional goals) and Article 48 now reads: "The state shall endeavour to organise agricultural and animal husbandry on modern and scientific lines and shall, in particular, take steps for preserving and improving the breeds, and prohibiting the slaughter, of cows and calves and other milch and draught cattle."

Like prohibition, our political history is littered with repeated attempts to totally ban the slaughter of cattle. The validity of such an attempt was first considered in detail in 1959 in the famous Mohammed Hanif Quareshi case. After a detailed discussion on the economic merits and demerits of a total ban, the Supreme Court held that the ban on slaughter of all cows, and calves of cows and calves of buffaloes, male and female, was constitutionally valid but a total prohibition on the slaughter of she-buffaloes, breeding bulls and working buffaloes, irrespective of their age or usefulness, was unconstitutional. Such a ban violated the fundamental right to carry on business of about 2,00,000 butchers in Bihar alone. These persons were mostly Muslims and belonged to the Qureshi community. Significantly, the Supreme Court noted that large sections of Muslims, Christians and Scheduled Castes and Scheduled Tribes consumed beef. It also noted that the practice of creating camps to house old and useless cattle, called "gosadans", was "not at all encouraging".

Bihar and Uttar Pradesh did not give up. They amended their laws and permitted slaughter of cattle only after they were more than 20 years old. The laws introduced a host of complex regulatory restrictions which included an appeal to the District Animal Husbandry Officer. The butcher community again successfully moved the Supreme Court which referred to the "almost unanimous opinion of experts that after the age of 15, bulls,

bullocks and buffaloes are no longer useful for breeding, draught and other purposes and whatever little use they may have then is greatly offset by the economic disadvantage of feeding and maintaining unserviceable cattle".

After this decision in 1961, the next attempt at a total ban before the Supreme Court was also unsuccessful in 1969. Almost 30 years later, in 1996, another attempt by the Madhya Pradesh government to absolutely ban the slaughter of all bulls and bullocks was again held to be violative of the fundamental right of butchers to carry on their business under Article 19(1)(g). The Supreme Court held that it was "pained" at the successive attempts of the state of Madhya Pradesh to nullify Supreme Court decisions.

In 2005, a bench of seven judges upheld the total ban on slaughter of cow and cow-progeny and made a valiant but regrettable attempt to justify the ban on aged cattle, observing that cattle never became "useless", at the most, they became "less useful". The court pointed out that such cattle still gave dung and urine, which had wide-ranging utility from biogas to medicinal formulations. Whatever the merits of these arguments, the Supreme Court mercifully confined its judgment to upholding the total ban only to "cow and cow-progeny".

The net result is that a total ban on all types of cattle in the latest notification is likely to be held as unconstitutional. It is difficult to comprehend how anyone could have drafted such a notification imposing a total ban in the teeth of a line of Supreme Court decisions from 1959. Or is it another attempt to draft a patently unconstitutional but politically convenient law and leave it to the courts to strike it down? One can always say: "See, we passed the law but these courts always come in our way".

And why is it senseless? First, there is no justification, economic or other, for this total ban. What are the commercial consequences of such a ban? How would it impact the livelihood of lakhs of butchers? What would be the impact on our huge beef exports? What would it do to the leather trade? Such a drastic decision should have at least required a detailed investigation into the possible impact on all the stakeholders.

Secondly, the nation continues to face serious crises on several fronts. There is a risk of Kashmir slipping into greater turmoil, relations with Pakistan seem to worsen every day and the Maoist problem stubbornly refuses to go away. On the economic front, the lack of growth in the manufacturing sector, the slowing of exports and the absence of employment generation are extremely worrisome. It is only a united India that can collectively rise and meet these challenges.

Unfortunately, there continues to be a serious disconnect between what we claim we want to be and what we actually do. A nation that wants to be an economic superpower can never achieve its ambition if it continues to indulge in irrelevant and irresponsible actions that systematically irritate a sizeable section of its population. The repeated attempts to ban cow slaughter and reiterate the demands for a Ram Mandir will seriously undermine the country's political unity. A minority which cannot triumph through the ballot box will, beyond a point, vent its anger through violent and other deadly means. The danger is, we cannot predict when this tipping point will be reached.

The utter folly of such short-sighted means was subtly emphasised by Justice J.C. Shah in 1969, in words that must be carefully read: "The sentiments of a section of the people may be hurt by permitting slaughter of bulls and bullocks in premises maintained by the local authority. But a prohibition imposed on the exercise of a fundamental right to carry on an occupation, trade or business will not be regarded as reasonable, if it is imposed not in the interest of the general public, but merely to respect the susceptibilities and sentiments of a section of the people."

The writer is a senior advocate practising at the Supreme Court of India